International Journal of Education and Science Research Review
E-ISSN 2348-6457
April- 2020, Volume-7, Issue-2
P-ISSN 2349-1817
www.ijesrr.org
Email- editor@ijesrr.org

संस्कृत लोककथा साहित्य में नारी की सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति का संक्षिप्त विश्लेषण

Monika Dabe
Ph.D. Scholar
Department of Sanskrit
Malwanchal University Indore (M.P.).

Ritu Bhardwaj
Supervisor
Department of Sanskrit
Malwanchal University Indore (M.P.).

सार–
संस्कृत लोककथा साहित्य में नारी की सामाजिक एवं धार्मिक स्थिति का अत्यन्त व्यापक, विशद एवं बहुपक्षीय चित्रण किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि तत्कालीन समाज में नर–नारी सम्बन्ध अधिक स्पष्ट और समता पर आधारित थे। नारी को समाज में हेय दृष्टि से नहीं देखा जाता था। परिवार, समाज और अन्य विभिन्न सामाजिक सम्बन्धों, अधिकारों तथा महत्व की दृष्टि से भी स्त्रियाँ पुरूषों की भाँति पूर्ण स्वतंत्रता का उपभोग करती थी। उनको समाज में स्व–निर्णय लेने का अधिकार प्राप्त था। मध्यकालीन प्रतिबन्धों से अभी वह मुक्त प्रतीत होती है।

प्रस्तावना–

समाज की प्राथमिक एवं महत्वपूर्ण संस्था है–परिवार। परिवार या कुटुम्ब में स्त्री के अनेक रूप होते हैं–पुत्री, माता, पत्नी, बहन, पुत्रवधू, सास, दादी, पोती आदि। पुत्रियों को तत्कालीन समाज में भार नहीं समझा जाता था। बहुधा कन्यायें स्वेच्छा से अपना जीवन–साथी का चयन करने को स्वतंत्र थी। "कथासरित्सागर' में सोमदेव भट्ट ने ऐसी अनेक कनन्याओं के उदाहरण प्रस्तुत किये हैं, जिन्होंने अपनी इच्छानुसार अपने पति को चुन लिया और उनके माता–पिता ने प्रसन्नता से उनका विवाह कर दिया। दैत्यराज प्रहलाद की पुत्री महल्लिका ने राजा सूर्यप्रभ को अपने पति के रूप में वरण कर लिया। इतना ही नहीं उसकी प्रसन्नता के लिए अन्य : दिव्यांगनाओं को उसके सुख के लिए भेंट कर दिया।[1]

उषा–अनिरूढ की प्रणयकथा कनन्याओं की विवाह सम्बन्धी स्वच्छन्दता की स्पष्ट उद्घोषणा करती है।[2] बहुधा पुत्रियाँ माता–पिता तथा कुटुम्बीजनों के विवाह–प्रस्ताव को अस्वीकार करने अविवाहित जीवन व्यतीत करने का दृढ़ निश्चय व्यक्त करती थी। राजा परोपकारी की पुत्री कनकरेखा ने स्पष्ट शब्दों में धमकी दे दी–"माँ ऐसा न कहो, ऐसा न कहो, मुझे किसी को न दो। तुम्हारे साथ मेरा वियोग न होगा। मैं अविवाहित ही ठीक हूँ। यदि तुमने मेरा विवाह किया, तो मुझे मरी ही समझो–

सा तच्छत्वैव साक्षेपमेंव मां प्रत्यवोयत।

1 कथासरित्सागर, पृ० 307
2 वही, पृ0 709

मा मैवमम्ब दातव्या नैव कस्मैचिदप्यहम्।।[3]

राजा कृत की सात पुत्रियों ने बाल्यकाल में ही वैराग्य–व्रत ले लिया। उन्होंने अपने कृटुम्बियों से उन्मुक्त भाव से कह दिया–

असारं विश्वमेवैतत्तत्रापीदं शरीरकम्।।
तत्राप्यभीष्ट संयोग सुखादि स्वप्नविश्रमः।।
एक परहितं त्वत्र संसारे सारमुच्यते।
तदनेनापि देहेन कुर्मः सत्वहितं वयम्।।
क्षिपामो जीवदेवैतच्छरीरं पितृकानने।
क्रव्यादगणोपयोगाय कान्तेनाति हयानेन किम्।।[4]

इसी प्रकार उस समय कन्यायें बहुधा अपने प्रेमी के साथ गान्धर्व–विवाह कर लिया करती थी। नागराज वासुकि के भतीजे कीर्तिसेन और ब्राहमण–कन्या श्रुतार्था का गान्धर्व– विवाह हुआ था।[5]

श्रीदत्त ने गान्धर्व–विधि से भिल्लराज की दुहिता से गुप्त विवाह कर लिया तथा उसको अपनी पत्नी बना लिया।[6]

पद्मावती और राजकुमार का विवाह भी गान्धर्व रीति से हुआ था और वह गुप्त रूप से उसके साथ रहने लगी।[7]

उपर्युक्त प्रसंगों से यह स्पष्ट है कि तत्कालीन समाज में कन्यायें बहुधा स्वतंत्र थी। इतना ही नहीं वे प्रायः अपने माता–पिता की इच्छा के विरूद्ध मान–अपमान, नैतिकता– अनैतिकता की चिन्ता न करते हुए अपने प्रियतम के साथ गुप्त विवाह कर लेती थी। उनके साथ भाग जाती थी। अनंगप्रभा नाट्याचार्य के साथ राजभवन से भाग गई।[8]

नारी–स्वतंत्रता से सम्बन्धित सर्वाधित उल्लेखनीय विशेषता यह है कि सम्पूर्ण संस्कृत–लोक–कथा –साहित्य में नारी अपनी वासनापूर्ति अथवा कामेच्छा की संतुष्टि या शारीरिक भूख को शान्त करने के लिए पूर्णतः स्वच्छन्द है।

कथासरित्सागर में अनेक कथाओं, प्रसंगों, उदाहरणों, कथनों ता पात्रों द्वारा यह स्पष्ट शब्दों में बार–बार दोहराया गया है कि पुरूषों की भाँति स्त्रियाँ भी काम सम्बन्धों को लेकर पूर्णतः मुक्त है। इतना ही नहीं, संस्कृत–लोक–कथाओं के नारी पात्र इतने अधिक साहसी, निर्भय, निर्द्वन्द, स्वच्छन्द तथा उन्मुक्त है कि वे

3 वही, पृ० 30–31
4 कथासरित्सागर, पृ० 485
5 वही, पृ0 77
6 वही, पृ0 151
7 वही, पृ0 283
8 वही, पृ0 519

अपनी शारीरिक क्षुधापूर्ति के लिए पुरूषों को धोखा देने, झूठ बोलने, प्रपंच फैलाने के अतिरिक्त आवश्यकता पड़ने पर उनकी हत्या करने से भी नहीं हिचकिचाते।[9]

भीलराज की दुराचारिणी पत्नी ने अपने प्रेमी तथा पति दोनों की हत्या कर दी। निश्चय ही कामुक स्त्री कौन सा साहस नहीं कर सकती और किसान विनाश नहीं कर सकती?

स्मराकृष्टा तनोत्येव या साहसमशङ्किता।
सा परस्वीकृता कुस्त्री कृपाणीव न हन्ति कम्।[10]

'शुकसप्तति' की अनेक कथाओं द्वारा यह स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ अतिरिक्त काम–सम्बन्धों को स्थापित करने में अत्यन्त दक्ष थी। इसके लिए वह किसी भी प्रकार के धूर्त कर्म से नहीं हिचकिचाती थीं । स्वेच्छाचार, उन्मुक्त यौनाचार केवल राज–परिवारों, वैभव–सम्पन्न अथवा उच्चवर्ग तक ही सीमित नहीं था। सामान्य अथवा निम्न वर्ग की स्त्रियाँ भी इस क्षेत्र में पारंगत थी। ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य, कुलाल, नापित, कृषक, चर्मकार, आदि सभी वर्गों की स्त्रियाँ अतिरिक्त यौन–सम्बन्धों को लेकर स्वच्छन्दता का आश्रय लेने में तनिक भी संकोच नहीं करती थी।

तत्कालीन समाज में राजपुत्रियाँ, सम्भ्रान्त परिवारों की कन्यायें, सम्पन्न परिवारों की महिलायें, साधन सम्पन्न कुलों की स्त्रियाँ परपुरूषों के साथ प्रेम सम्बन्ध स्थापित करने के लिये सखियों, दूतियों, कुट्टनियों, तंत्र–मंत्र तथा टोना–टोटका करने वाली स्त्रियों का भी सहारा लेती थी।

संस्कृत–लोक–कथाओं के अनेक प्रसंगों में स्मृतियों की भाँति नारी को संसार रूपी वृक्ष का मूल, पापों की भूमि तथा संतापरूपी फलों का पुष्प घोषित किया गया है–

संसार वृक्ष मूलं याः पापकन्दल भूमिका।
सन्तापफलपुष्पाणि योषितः कि सुखावहाः।
मायामूलमिदं सर्व तस्या मूलं हि योषितः।
संयोगी योषितां मूलं तं त्यक्त्वा च सुखानि नः।।[11]

'जातकमाला' में भी यह कहा गया है कि निन्दनीय स्त्री दोनों कुलों. की कीर्ति और सम्पत्ति को डुबोती है, जैसे चन्द्रमा के डूबने पर बादलों वाली रात आकाश और पृथ्वी की शोभा और विभाग को छिपाती है–

कुलदयस्यापि हि निन्दिता स्त्री यशो विभूतिं च तिरस्करोति।
निमग्नचन्द्रेव निशा समेधा शोभां विभागं च दिवस्पृथिव्याः।।[12]

स्त्रियों के सम्बन्ध में यह धारणा अत्यन्त प्रबल थी कि वह चंचल, स्नेहशून्य, गुणरहित, कृत्सित, सन्देहपूर्ण, अज्ञाना एवं अल्पबुद्धि होती हैं। वह पति और पुत्र का तिरस्कार कर उनके उपकार को नहीं मानती। पहले वह स्नेहपूर्ण और कोमल किन्तु स्वार्थसिद्धि के बाद निष्ठुर हो जाती है–

महिला चपला स्वामिन्निःस्नेहा गुणवर्जिता।

---

9 वही, पृ 728
10 वही, पृ0 467
11 शुकसप्तिः, पृ, 242
12 जातकमाला, पृ0, 138

कुविकल्पा लनुप्रज्ञा यथोक्तं सत्यमेव तत्।।
मन्यते सुकृतं नैव पतिपुत्र पराड,गमुखी।
पूर्व स्नेहमयी मृद्दी कृतकार्याति निष्ठुरा।।[13]

इसी प्रकार नारियों के सम्बन्ध में बहुधा यह समझा जाता था कि वह पर पुरूष को अपनी ओर आकर्षित करने के लिये उसके अनुकूल आचरण करती है। उसको मदनपाश में बांध लेने पर मछली की भांति चारे की तरह निगल लेती है।

उनका स्वभाव समुद्र की लहरों की भांति चंचल, संध्याकाल के मेघों की तरह क्षणिक अनुरक्त तथा स्वार्थ सिद्धि के बाद वे निचोड़े हुए महावर की तरह त्याग देती है–

कुर्वन्ति तावत्प्रथमं प्रियाणि यावन्न जानन्ति नरं प्रसकतम्।
ज्ञात्वा च तं मन्मथपाशबद्धं ग्रस्तामिषं मीनमिवोद्धरन्नि।।
समुद्रवीचीव चलस्वभावाः सब्ध्याभ्ररेखेव मुहूर्तरागाः।
स्त्रियः कृतार्थाः पुरूष निरर्थ निष्पीडितालक्तकवत्तयजन्ति।।[14]

अनेक संस्कृत लोक–कथाओं में स्त्रियों पर विश्वास करने से विषसेवन तथा सर्प को गले में लपेट लेना अच्छा माना गया है। क्योंकि स्त्रियों पर तो जादू–मंत्र भी नहीं चलता है–

वरं हालाहलं युक्तमहिर्बद्धो वरं गले।
न पुनः स्त्रीषु विश्वासों मणिमन्त्राद्यगगोचरः।।[15]

तत्कालीन समाज में विधवा स्त्री की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। प्रायः विधवा को पति की चिता पर सती होने के लिए विवश कर दिया जाता था। यदि वह गर्भवती होती थी तो कृटुम्बी उसकी धन–सम्पत्ति का अपहरण कर लेते थे।[16]

विधवा को अपनी और अपनी संतान की उदरपूर्ति के लिए दासी का काम करना पड़ता था।

उस समय वेश्या–प्रथा का बहुत अधिक प्रचलन था। वेश्यायें वासना–तृप्ति के साथ गायन, वादन, नृत्य एवं संगीत द्वारा मनोरंजन करती थी। वेश्याओं के साथ प्रायः विवाह भी कर लिया जाता था। उनको वेश्यावृत्ति से मुक्त भी कर दिया जाता था।[17]

नारी की धार्मिक स्थिति

संस्कृत–लोक–कथा–साहित्य में वर्णित समाज धर्मप्रधान समाज था। नारियाँ धार्मिक कर्तव्यों, अनुष्ठानों, नियमों, विधि–विधानों को भक्ति–भाव और तनन्मयता से सम्पन्न करती थी। अनेक प्रसंगों द्वारा उनकी धार्मिक निष्ठा का परिचय मिलता है। स्त्रियाँ विभिन्न देवी–देवताओं की पूजा–अर्चना जल चढ़ाकर, पुष्पहार भेंट करके,

13 शुकसप्ततिः, पृ0, 274
14 शुकसप्ततिः, पृ0, 328–329
15 कथासरित्सागर, पृ0, 134
16 वही, पृ0, 78–79
17 वही, पृ0, 197

मंत्रपाठ, स्तुतिगान आदि द्वारा करती थीं। वे पूजा–सामग्री आदि उपहार लेकर मन्दिर जाती थीं। कन्यायें इच्छित वर प्राप्ति के लिए ब्रत–उपवास किया करती थीं।[18]

माता–पिता और गुरूजनों का चरणस्पर्श करके उनसे आशीर्वाद ग्रहण करना पुण्य समझा जाता था।[19]

कन्या प्रायः प्रातः स्नान करके शिव–मन्दिर में पूजा के लिए जाती थी।[20] शिव, विष्णु, गणेश तथा चण्डी की अर्चना की जाती थी। अविवाहिता कन्यायें मनोवांछित वर की प्राप्ति के लिए सिद्धिदाता वरदानी गणेशकी आराधना करती थीं–

तमुपागत्य भक्त्या त्वं पूजय प्रार्थितप्रदम्।
येन निर्विध्नमेवाशु स्वोचितं पतिमाप्स्यसि।।[21]

व्रत–उपवास के अतिरिक्त ब्राहमणों को भोजन कराना, वस्त्र प्रदान करना और स्वणादि का दान पुण्यकर्म समझा जाता था। मदनमाला ने विधिवत् स्वर्णदान किया–

सा तस्मै वेदसंख्यकान ददौ सौवर्णपुंभुजान्।
अर्चिताय व्रत–क्षामैरङ्गै–विरहपाण्डुरैः।।[22]

वस्तुतः मदनमाला अत्यधिक पुण्य–लाभ की इच्छा से प्रतिदिन बहुत दान देती थी।[23]

विविध अवसरों, उत्सवों, समारोहों और आयोजनों में विभिन्न प्रकार के मंगलाचार स्त्रियों के द्वारा किये जाते थे।[24]

इसी प्रकार विपत्ति, संकट, रोग, दुर्दशा में नारियाँ देवी की शरण लेती थी–

हे देवि! तुम सौभाग्य और सतीत्व की अधिष्ठात्री देवी हो। तुम अपने पति काम–रिपु (शिव) के आधे शरीर में निवास करती हो। तुम संसार की सभी स्त्रियों की शरणदायिनी हो। दुःखों का नाश करने वाली हो। फिर तुमने एक साथ ही मेरे भाई और पति को क्यों छीन लिया? मैं तो सदा तुम्हारी भक्ति करती रही हूँ। मेरे प्रति तुम्हारा यह कार्य उचित नहीं हुआ–

मैं तुम्हारी शरण में आई हूँ, अतः तुम मेरी यह करूण प्रार्थना सुनो–दुर्भाग्य से लुटे हुए उस शरीर का अब मैं त्याग करती हूँ। अगले जम्नों में मैं जहाँ कहीं भी उत्पन्न होऊँ, पति और भाई के रूप में ये दोनों ही मुझे प्राप्त हों। इस प्रकार स्तुतिपूर्वक देवी से निवेदन करके उसने पुनः उन्हें प्रमाण किया–

व्यजिज्ञपच्च देवीं तां देहत्यागोन्मुखी सती।
देवि सौभाग्यचरित्रविधानैकाधिदेवते।।
अध्यासितशरीराद्धे भर्त्तुमरिरिपोरपि।

---

18 वही, पृ0, 29
19 वही, पृ0, 49
20 वही, पृ0, 435
21 वही, पृ०, 383
22 कथासरित्सागर, पृ0, 93
23 वहीं, पृ0, 195
24 वही, पृ0, 221

अशेषललनालोकशरण्ये दुःखहारिणि।।
हतावेकपदे कस्माभरद्वर्त्ता भ्राता च मे त्वया।
न युक्तमेतन्मयि ने नित्यभक्ता हयहं त्वयि।।
तनमे श्रिताया: शरणं श्रृण्वेकं कृपणं वचः।
एतां तावत्तयजाम्यत्र दौर्भाग्योपहतां तनुम् ।।
जनिष्ये देवि भूयस्तु यत्र कुत्रापि जन्मनि।
तत्रैतावेव भूयास्तां द्वौ भर्तृश्रातरौ मम।
इति संस्तुत्य विज्ञप्य देवीं नत्वा च तां पुनः।।[25]

संस्कृत–लोक–कथा–साहित्य में ऐसे अनेक प्रसंगों और कथाओं का उल्लेख मिलता है जिनके द्वारा नारियों के अन्ध–विश्वास, जड़ता, अज्ञान और भय पर प्रकाश डाला गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय बहुत सी स्त्रियों के भावुक स्वभाव, भक्ति भावना और श्रद्धा भाव का अनुचित लाभ उठाती थीं। यही कारण है कि अनेक स्त्रियाँ प्रेत–बाधा, जादू–टोना, झाड़–फूँके आदि तात्रिंक प्रयोग तथा अन्य धार्मिक विधि–विधानों का सहारा लेकर उनके धार्मिक विश्वास का दुरूपयोग करती थी।

कथासरित्सागर में सोमदेव भट्ट ने अनेक धूर्ता, सिद्धीकरियों, परिव्राजिका, डाकिनी, कालरात्रि आदि का चित्रण किया है, जो विविध प्रकार के जादू–टोनों द्वारा लोगों को ठगा करती थीं।

धूर्ता सिद्धिकरी ने एक डोम को भोली–भाली बनाकर ठग लिया।[26]

दुष्टा परिव्राजिका ने देवस्मिता के साथ छल किया। उसने मिर्च के चूर्ण से भरे माँस के टुकड़े को कुतिया को खिला दिया और बहाना बना दिया कि वह और कूतिया पूर्व जन्म में किसी एक ब्राहमण की पत्नियाँ थीं।[27]

कथासरित्सागर के तृतीय लम्बक में एक कालरात्रि नामक ब्राहमणी की रोचक कथा है। उसने मनुष्य का माँस भक्षण करके डाकिनी मन्त्रों को सिद्ध कर लिया था।

सोमदेव ने कालरात्रि की भयंकर आकृति का सजीव चित्र अंकित किया है–

वह विकट रूप वाली थी, उसकी मिली हुई भौहें और नीली आँखें धंसी हुई थी, नाक चिपटी थी, स्तन फूले और लटके हुए थे, पेट फूला हुआ था, फटें और फूले पाँव ऐसे लगते थे मानों विधाता ने कुरूपता के निर्माण में अपनी विशेषता का प्रदर्शन किया हो। कालरात्रि ने डाकिनी मन्त्रों की दीक्षा देने के लिये देवताओं द्वारा भोग लगाया हुआ मानव माँस खाने को दिया। मन्त्रों की दीक्षा लेकर वह नग्न अवस्था में आकाश में उड़ने लगी।[28]

ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय कुछ स्त्रियाँ वाम मार्ग में दीक्षा लेकर विभिन्न प्रकार के तांत्रिक प्रयोग और जादू–टोना किया करती थी। उनके कार्य–कलाप अत्यन्त भीषण होते थे। वह छुरी लिये हुए भीषण

25 वहीं, पृ0, 344
26 कथासरित्सागर, पृ0 211
27 वही, पृ0 215
28 वहीं, पृ0, 388

फूत्कार करती हुई, नेत्रों और मुख से आग की लपटे फेंकती हुई बहुत सी डाकनियों के झुन्ड के साथ घूमती थीं–

आकृष्टवीरच्छुरिका मुक्त फूत्कारभीषणा।
नयनाननवान्तोल्का डाकिनीचक्रसडन्ता।।[29]

वाममार्गी स्त्रियाँ अन्य स्त्री–पुरूषों को अपने सम्प्रदाय में सम्मिलित कर लेती थी। रानी कुवलयावली ने राजा आदित्यप्रभ को डाकिनी मन्त्रों के प्रभाव का बढ़ा चढ़ाकर वर्णन किया। राजा द्वारा निषेध करने पर उसने प्राण त्याग की धमकी दी। रानी ने विविध प्रकार की पूजा करके राजा को मण्डल में आमंत्रित कर दिया। रानी फलभूति नामक ब्राहमण को बलिदान के लिये आकृष्ट कर चुकी थी। राजा पाप से भयभीत था किन्तु प्रिय पत्नी की बात भी नहीं टाल सका।[30]

इस प्रसंग से यह स्पष्ट होता है कि तत्कालीन नारी समाज में अनेक धार्मिक आडम्बर, पाखण्ड, अनाचार, अन्धविश्वास व्याप्त थे। स्त्रियों में वामाचार का भी बहुत अधिक प्रचार था। वे अपनी स्वार्थ–सिद्धि के लिए उनका प्रयोग करती थी।

स्त्रियों की धार्मिक भावनाओं का दुरूपयोग करने के लिये बहुत सी नकली मायावी संन्यासिनी अथवा साधुनी का भेष धारण करने वाली स्त्रियाँ बेरोकटोक घरों में घुसकर अनेक प्रकार के माया जाल रचा करती थीं–

एष प्रव्यजकस्त्रीणां विषयः कुहकादिषु।
प्रयोगेष्वभियुक्तानां सडतानां तथाविद्यैः।।
ता हि केतवतापस्यः प्राविश्यैवानिवारिताः।
गृहेषु मायाकुशलाः कर्म किं कि न कुर्वते।।[31]

राजा दृढ़वर्मा को नयी रानी कदली गर्भा के प्रेम में अत्यधिक आसक्त और लिप्त देखकर महारानी सपत्नी सुलभ ईर्ष्या से व्याकुल हो उठी, उसने मन्त्री को बुलाकर उसका कोई उपाय करने के लिये आग्रह किया। मन्त्री ने महारानी से कहा कि–

यह कार्य तो कोई प्रव्राजिका स्त्री या जादू–टोना करने वाला व्यक्ति ही कर सकता है। मन्त्री के द्वारा ऐसी ही एक दुष्टा परिव्राजिका को बुलाया गया। उसने धन के लोभ से व्याकुल रानी से कहा–मैं विविध प्रकार के प्रयोगों को जानती हूँ।[32]

कथासरित्सागर में भैरवी और भैरवियों अथवा योगनियों के प्रसंग का वर्णन किया गया है। वे भी अनेक प्रकार के तांत्रिक प्रयोग और उपहारों से पूजन करते थे। भैरव और योगनियां ताण्डव नृत्य करती थीं–

सम्पूजितश्च सर्वाभिरूपहारैः स मातृभिः।

29 वही, पृ० 392
30 वहीं, पृ0, 401
31 कथासरित्सागर, पृ० 734
32 वहीं, पृ0, 735

ताण्डवेन क्षण नृत्यन्नक्रीडद्योगिनीसखः।।[33]

इसी प्रकार सोमदेव भट्ट ने एक ऐसी मूर्ख स्त्री की कथा का एक अत्यन्त रोचक वर्णन किया है–इस स्त्री के एक पुत्र था। वह एक और पुत्र की इच्छा से एक पाखण्डिन नीच तपस्विनी के पास गयी। उस क्षुद्र तापसी ने उपाय बतलाते हुए कहा–तुम अपने जीवित बालक को मारकर यदि देवता को बलि दे दें तो निश्चय ही तुम्हारा दूसरा पुत्र होगा। धार्मिक अन्धविश्वास से प्रेरित होकर वह स्त्री वैसा करने को तत्पर हो गयी। तभी उसकी एक हितैषी वृद्धा ने उसे फटकारते हुए कहा– अरि पापिन जीवित पुत्र को तो मारना चाहती है और जिसका अभी जन्म नहीं हुआ उसे जीवित रखना चाहती है।

इसी प्रकार शाकिनी (डाकिनी) आदि के चक्कर में पड़कर स्त्रियाँ नष्ट हो जाती हैं और वृद्धा स्त्रियों के नियंत्रण तथा उपदेश से वे रक्षित होती हैं–

एवं पतन्त्यकार्येसु शाकिनी सडन्र्ताः स्त्रियः।
वृद्धोपदेशेन तु ता रक्ष्यन्ते कृतयन्त्रणाः।।[34]

तत्कालीन समाज में विविध प्रकार के शारीरिक, मानसिक कष्टों, रोगों, चिन्ताओं, विपत्तियों और भय आदि को दूर करने के लिये पूजा–अर्चन के अतिरिक्त मनुष्य के अंग–प्रत्यंगों की बलि भी चढ़ाई जाती थी। कनकमंजरी ने अशोककरी के लिये नकली हंसावली द्वारा अघोरी अथवा कापालिक उपासना पद्धति का प्रयोग किया।

सोमदेव भट्ट ने इसका विस्तृत वर्णन किया है–जब रात हुई, तब वह छिपकर दूसरे दरवाजे से निकल गई और हाथ में तलवार लेकर एक सूने शिवालय में गई जिसमें केवल एक शिवलिंग स्थापित था। वहाँ उसने तलवार से एक बकरे को मार डाला और उसके रक्त से शिवलिंग को स्नान कराया। रक्त का ही अर्ध्य दिया, आँतड़ियों की माला चढ़ाई, उसके हृदय–कमल को शिवलिंग के माथे पर चढ़ाया, उसकी आँखों का धूप दिया और उसके सिर की बलि देकर शिवलिंग का पूजन किया। अनन्तर, उसने रक्त चन्दन से लिपी हुई अग्रवेदी पर गोरोचन से अष्टदल कमल बनाया। उसके कोने पर रक्त की पिट्ठी की तीन पैरों और तीन मुखोवाली ज्वर की मूर्ति बनाई तथा उसके हाथों में भस्ममुष्टि नामक शस्त्र दिया।

निष्कर्ष–

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज में सामान्यतः नारी की स्थित सनन्तोषजनक थी। पुत्री, मात, पत्नी, बहिन आदि रूपों में परिवार में उसका सम्मान किया जाता था। स्त्री को प्रायः स्वतंत्रता थी। कुछ स्त्रियाँ दासी कर्म अथवा वेश्यावृत्ति के लिये विवश थी। संस्कृत–लोक–कथा में जहाँ कहीं भी नारी की निन्दा की गयी है वह उसकी उच्छृंखल वृत्ति, स्वेच्छाचार, दुराचार अथवा स्वार्थान्धता, कामुकवृत्ति तथा स्त्रियों के बुरे–व्यवहार की ही की गयी है। संस्कृत–लोक–कथाओं में चर्चित समाज में धार्मिक प्रवृत्तियों, नियमों, आचरणों की प्रधानता दृष्टिगत होती है। विशेष रूप से स्त्रियाँ अधिक धार्मिक हैं। वे विबध प्रकार के धार्मिक विधि–विधान, पूजा–पाठ, व्रत–उपवास, देवी–देवताओं की अर्चना, स्तुति, मन्दिर जाना आदि नियमों का भक्ति–भाव से पालन करती हैं, किन्तु तत्कालीन समाज में स्त्रियों में जादू–टोना,

33 वही, पृ० 648

34 वहीं, पृ0, 844

भूत–प्रेत, की पूजा, तांत्रिक प्रयोग, बलि चढ़ाना तथा अन्य वामाचार का प्रभाव भी अनेक प्रसंगों में देखने में आता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची–

- अमर कोश : अमर सिंह, श्री हरगोविन्द शास्त्री, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, आफिस, वाराणसी
- कथा–सरित्सागर : सोमदेव भट्ट, मोती लाल बनारसीदास, दिल्ली, 1930
- कथा–सरित्सागर एक : डॉ0 वाचस्पति. द्विवेदी, सुनील कुमार द्विवेदी, सांस्कृतिक अध्ययन चौखम्बा, औरियण्टालिया, वाराणसी, 1978
- कथासरित्सागर तथा : डॉ0 एस0 एन0 प्रसाद, चौखम्बा औरियण्टालिया, भारतीय संस्कृति : वाराणसी, 1978
- कथासरित्सागर : डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल, बिहार, राष्ट्रभाषा परिषद, पटना ।
- जातकमाला : आर्यशूर सम्पादक, सूर्यनारायण चौधरी, मोतीलाल बनारसीदास, द्वितीय संस्करण, 1984
- दशरूपक : धननन्जय, सम्पादक भोलाशंकर व्यास, वाराणसी, चौखम्बा विद्या भवन चौक, वाराणसी, 1960